खुदी मिटी कि खुदा बने
(सूफ़ी–सम्प्रदाय में प्रेम)

–नितेश उपाध्याय
शोधार्थी : भारतीय भाषा केन्द्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सारांश

सूफ़ी सम्प्रदाय के समूचे काव्य–चिंतन के केन्द्र में प्रेम का स्थान सर्वोपरि है। सूफ़ी सम्प्रदाय में पुरुष को आत्मा एवं स्त्री को परमात्मा माना गया है। सूफ़ी साधना में आत्मा (पुरुष)–परमात्मा (स्त्री) के प्रेम की अभिव्यक्ति आशिक और माशूक के रूप में की गयी है। विरह–मिलन की अनुभूतियाँ, प्रेम की तड़पन एवं छटपटाहट का मनोरम वर्णन सूफ़ी साधना में चहुँओर विद्यमान है। सूफ़ी साधना में प्रेम एक ऐसी संजीवनी है जहाँ जीवन की सब विरोधी शक्तियाँ स्वयं को मिटाकर एक हो जाती है। केवल प्रेम ही ऐसा क्षेत्र है जहाँ एकत्व और द्वित्व विरोध भाव में नहीं रहते। यही सूफ़ी संप्रदाय में प्रेम का मूल उत्स है।

मुख्य शब्द–मारिफत–सिद्धावस्था, फना–लीन होना, बका–नित्यता, अनश्वरता

प्रेम मूलतः सूफ़ी संप्रदाय का केन्द्रीय तत्त्व है। प्रेम वस्तुतः मारिफत के भाव समन्वित रूप का ही दूसरा नाम है। सूफ़ियों के यहाँ प्रेम प्रच्छन्न रूप में दिखाई देता है जिसका आधार मुख्यतः व्यक्तिगत रहस्यवादी अनुभूति है। सूफ़ी साधना में ईश्वर प्राप्ति के जितने सोपान बताए गए हैं उन सब में प्रेम का स्थान सर्वोपरि है। चित्त की रति सम्पृक्त रागात्मिका प्रवृत्ति ही प्रेम का रूप धारण करती है। समस्त विश्व उसी प्रेम का परिणाम है। इस दृश्यमान जगत् के प्रत्येक परमाणु में सूफ़ी साधक प्रेम के रूप माधुरी की कल्पना करते हैं तथा इस सौन्दर्य विभूति में स्वयं को समर्पित कर देते हैं। सूफ़ी साधक परमात्मा के साथ अपने रागात्मक संबंध स्थापित करते हैं साथ ही उस परम सत्ता में एकाकार हो जाने की तीव्र भावना उनके मन में सदा विद्यमान रहती है।

सूफ़ी साधक परम सत्ता को प्रियतम कह कर बुलाते हैं एवं उसके प्रेम में सदैव रत दिखाई पड़ते हैं। इस संसार में प्रियतम के सिवाय उन्हें कुछ भी नहीं दिखाई देता है और वह प्रियतम में अपने समस्त अहं भाव का परित्याग कर समर्पित हो जाते हैं। सूफ़ी साधना में आध्यात्मिक प्रेम की प्राप्ति के लिए सांसारिक प्रेम एक महत्त्वपूर्ण सोपान है। दृश्यमान जगत् व इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया हुआ सौंदर्य उसी परमात्मा का अन्यतम रूप है। सूफ़ी साधक अपने साधना का मुख्य ध्येय उस परमात्मा के प्रति अपने पूर्ण समर्पण में मानते हैं। आन्तरिक प्रेम निवेदन सूफ़ियों की आध्यात्मिक यात्रा का महत्त्वपूर्ण अंग है। श्री चन्द्रबली पाण्डेय ने ठीक ही कहा है कि– ''वासना, भावना, धारणा के प्रतिपादन में सूफ़ी चाहे जितना तर्क करें, पर अन्तःकरण से वे सर्वदा प्रेम के पुजारी और इश्क के कायल हैं। इश्क के आधार पर ही उनका सारा श्रेय निर्भर है। प्रेम के पुल पर चलकर ही सूफ़ी भवसागर पार करते हैं। यही उनका अमोघ अस्त्र या परम साधना है।''[1]

सूफ़ी साधकों की दृढ़ आस्था है कि प्रेम ही सब रसों का मूल है। प्रेम की सर्वव्यापी

इयत्ता एवं महत्ता पर प्रकाश डालते हुए एक सूफ़ी के काव्यात्मक उद्‌गार है– ''अगर इश्क न होता, इन्तजाम आलमे सूरत न पकड़ता। इश्क बनाता है, इश्क जलाता है। दुनिया में जो कुछ है, इश्क का जल्वा है। आग इश्क की गर्मी है। हवा इश्क की बेचैनी है। पानी इश्क की रफ्तार है, खाक इश्क की कियाम है। मौत इश्क की बेहोशी है, जिन्दगी इश्क की होशियारी है, रात इश्क की नींद है, दिन इश्क का जागना है। मुसलिम इश्क का जमाल है, काफिर इश्क का जलाल है, नेकी इश्क की कुरबत है, गुनाह इश्क की दूरी है, वहिश्त इश्क का शौक है।''[2]

सूफ़ी साधकों का मुख्य उद्‌देश्य 'अलहक्क' के साथ 'एकत्व' प्राप्त करना है। उनकी दृष्टि में वज्द एक ऐसी भावपूर्ण स्थिति है जिसके माध्यम से आत्मा परमात्मा में मिलकर 'एकत्व' की स्थिति को प्राप्त कर सकती है। सादी ने इसकी मनोरम व्याख्या करते हुए कहा है कि– ''एक दरवेश से उसके अन्य साथियों ने व्यंग्य करते हुए पूछा कि उस आनन्द की फुलवारी से लौटकर वह कौन–सा उपहार ले आया है। दरवेश ने जवाब दिया कि उस गुलाब की झाड़ी (परमात्मा का दर्शन) के पास पहुँचकर उसकी इच्छा हुई कि बहुत से गुलाब के फूल तोड़ कर ले चलूँ जिसमें कि अपने साथियों को उपहार दे सकूँ, लेकिन जब मैं वहाँ था तब गुलाब की झाड़ी की खुशबू से इतना मस्त हो गया कि मेरी पोशाक की खूँट जिसमें मैं फूलों को बाँधना चाहता था, मेरे हाथ से छूट गई। जिसने परमात्मा को जान लिया है। उसकी जिह्‌वा में शक्ति नहीं रहा जाती कि वह कुछ कह सके।''[3]

इस प्रकार भावावेशमयी स्थिति के माध्यम से साधक परमसत्ता के साथ एकाकार हो जाने में समर्थ हो जाता है। इसके लिए साधक को कठिन परिश्रम करना पड़ता है। साधक परमसत्ता से एकाकार हो जाने के पश्चात् इस भौतिक संसार से पूर्ण रूप से विमुख हो जाता है। इस दशा में साधक के अन्तर्मन में समाधि की सी स्थिति आ जाती है जिससे उसे अपार आनन्द की अनुभूति होती है। भावोल्लास (वज्द) के बाद प्राप्त होने वाली 'वजूद की स्थिति' (परम सत्ता की स्थिति) को सूफ़ी साधक उस परम सत्ता का आशीर्वाद ही समझते हैं। साधक को परमात्मा के नाम स्मरण, ध्यान, उपासना में अपूर्व सुख एवं प्रेम की अनुभूति होती है व ऐसा करने से उसके अन्तर्मन के समस्त पापों एवं परितापों का शमन हो जाता है। समाधि की आनन्द अवस्था में पहुँचकर साधक समस्त भौतिक व्यापारों एवं विषयों से विमुख होकर उस परमसत्ता में इस प्रकार से एकाकार हो जाता है उसका अपने प्रियतम से स्वतंत्र कोई अस्तित्व नहीं रह जाता है।

सूफ़ी साधना में फना का महत्त्वपूर्ण स्थान है। साधक जब सम्पूर्ण इच्छाओं, वासनाओं, आसक्तियों एवं द्वन्द्वों का परित्याग कर अपने अस्तित्व को परमात्मा में लय कर देता है। इस प्रक्रिया को सूफ़ी साधना में 'फना' कहा जाता है। निकल्सन ने फना को परिभाषित करते हुए कहा है कि– ''फना आत्मा की वह उन्नत स्थिति है जिसकी पृष्ठभूमि में पहुँचकर उसकी सारी आकांक्षाएँ एवं आसक्तियाँ मिट जाती है और इस प्रकार आत्मा 'स्व' चिंतन से विरत होकर स्वयं परम प्रियतम के चिंतन का केन्द्र बन जाता है तथा प्रेमी और प्रेमाराध्य का सारा अन्तर दूर होकर दोनों में ऐक्य भाव आ जाता है।''[4]

सूफ़ी साधकों की दृष्टि में आध्यात्मिक जीवन एक यात्रा है तथा आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होकर उस प्रियतम को पाने की तीव्र इच्छा रखने वाले को 'सालिक' कहा जाता है। इस पथ पर चलने के लिए साधक को अपने समस्त दुर्गुणों का परित्याग कर निष्कलुष भाव से

प्रयाण करना पड़ता है व जैसे ही उसे परमात्मा का ज्ञान प्राप्त हो जाता है, साधक अपनी आत्मा का लय कर 'फना' की स्थिति में पहुँच जाता है। इसके पश्चात् की स्थिति 'बका' की है जिसमें पूर्ण शान्त भाव से उसकी आत्मा, परमात्मा में निवास करने लगती है। जैसे–जैसे वह अपने चरम लक्ष्य की ओर अग्रसर होता जाता है वैसे–वैसे उसकी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास होता जाता है। हुज्वेरी ने कहा है– ''परमात्मा के प्रति मनुष्य का प्रेम एक ऐसा लोकोत्तर गुण है जो परमात्मा पर ईमान लाने वाले पुण्यात्मा के हृदय में श्रद्धा और आलोक के रूप में स्वयं को प्रकट करता है। अतः वह अपने प्रिय को संतुष्ट करने एवं पाने के लिए उत्कण्ठित हो उठता है। सर्वदा उसकी याद में बेचैन बना रहता है। उसे छोड़कर वह सब को भुला देता है।''[5]

सूफ़ी साधना में आत्मा– परमात्मा के प्रेम की अभिव्यक्ति आशिक और माशूक के रूप में की गयी है। विरह–मिलन की अनुभूतियाँ, प्रेम की तड़पन एवं छटपटाहट का मनोरम वर्णन सूफ़ी साधना में चहुँओर विद्यमान है। सूफ़ी साधकों का मानना है कि जीवात्मा परमात्मा के विरह में व्याकुल होकर उसी की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयासरत रहता है। सूफ़ियों की महत्त्वपूर्ण विप्रलम्भ की दशाओं का सूफ़ियाना शैली में चित्रण करते हुए पं. चन्द्रबली पाण्डेय ने कहा है कि– ''जीव को अपने प्रियतम का पता उसी की कृपा से चला। कभी वह उसके साथ था, उससे प्रतिज्ञाबद्ध हो चुका था, अतः उसको पहचानने में देर न लगी। उसका परिचय तो मिल गया, किंतु वह न मिला। उसी की खोज में सूफ़ी निकल पड़े हैं। खोजते–खोजते जब वे थककर सो जाते हैं तब उनका प्रियतम धीरे से उनके पास आता है और संजीवन–रस छिड़क कर उनको सचेत कर देता है। किन्तु उनको इस उद्‌बोधन में शान्ति नहीं मिलती, उनका विरह और भी बढ़ जाता है, आग को आहुति मिल जाती है, फिर तो जहाँ कहीं देखते हैं, प्रियतम ही का रंग दिखाई देता है। अंत में उनसे कोई कह पड़ता है कि जिसके पीछे तुम मर रहे थे, वह कहीं अन्यत्र में नहीं, तुम्हारे ही हृदय में है, जहाँ कहीं तुम देखते हो, उसी की झलक दिखायी देती है, पर वह सदा परोक्ष रहता है। कारण, जब तुम नहीं होते, तब वह हो जाता है और जब वह हो जाता है तब तुम नहीं रहते।''[6]

सूफ़ी साधकों की दृष्टि में यह सम्पूर्ण विश्व प्रेम का ही पर्याय है। उनकी दृष्टि जहाँ तक जाती है सर्वत्र प्रेम का ही मानस सागर दिखायी देता है। साधक जब प्रिय मिलन के पथ पर अग्रसर होता है तो उसके मार्ग में अनेक प्रकार के कष्ट एवं झंझावात आते हैं, साधक उन सब को साहसपूर्वक झेलते हुए अंततः अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। यह सूफ़ी सम्प्रदाय की मुख्य विशेषता है। सूफ़ी साधकों का प्रेम पूर्ण निष्काम भाव से युक्त होता है। उनकी एकमात्र लालसा प्रिय के रूप सुधा–पान की होती है। 'प्रेम के लिए ही प्रेम करना' सूफ़ी साधकों एवं साधना का मुख्य आदर्श है। उनका मानना है कि जो भगवान से प्रेम करते हैं, उनसे भगवान भी प्रेम करता है। प्रेम विशुद्ध आत्मा एवं परमात्मा की ही प्रतिच्छवि है। महाकवि जायसी ने प्रेम की उदात्तता का अपने ग्रन्थ पद्‌मावत में अद्‌भुत ढंग से वर्णन किया है। रतनसेन स्वयं ही कहता है कि प्रेम का समुद्र इतना अथाह है कि उसका कोई आर–पार नहीं है और कोई उसकी थाह नहीं ले सकता। जो कोई इस प्रेम के समुद्र में पड़ता है वह श्रेष्ठ हंस के समान शुद्धात्मा हो जाता है और वही उसे पार कर सकता है। इसीलिए कहा गया है कि प्रेम में मनुष्य बैकुंठवासी हो जाता है अन्यथा वह एक मुट्‌ठी भर मिट्‌टी मात्र ही तो है। यथा–''मानुष प्रेम भएउ बैकुंठी। नाहिं त काह, छार एक मूठी।।''

दुनिया की प्रत्येक अस्तित्त्वमान वस्तु का इति एवं अथ तो प्रेम ही है। अतः प्रेम भावना के साथ–साथ सत्य एवं आनन्दस्वरूप है जो संसार की सभी वस्तुओं के निर्माण का मूल स्रोत है। यह पूर्ण चेतनता की वह स्वच्छ श्वेतकिरण है जो ब्रह्म से उद्‌भूत होती है। अपनी चेतनता को प्रेम की ऊँची सतह तक ले जाकर और विश्व भर में इसी प्रेमाप्त चेतना का विस्तार करके ही हम ब्रह्म विहार या असीम आनन्द में एकात्मकता प्राप्त कर सकते हैं। प्रेम में जीवन की सब विरोधी शक्तियाँ स्वयं को मिटाकर एक हो जाती हैं। केवल प्रेम ही ऐसा क्षेत्र जहाँ एकत्व और द्वित्व विरोध भाव से नहीं रहते। प्रेम स्वयं एक साथ अनेक और एक रूप में होता है। यही सूफ़ी सम्प्रदाय में प्रेम का मूल उत्स है।

सन्दर्भ सूची–

1. श्री चंद्रबली पाण्डेय, तसव्वुफ और सूफ़ीमत, पृ.–65
2. वही, पृ.–166
3. श्री रामपूजन तिवारी, सूफ़ी मत : साधना और साहित्य, पृ.–63
4. आर.डी. निकल्सन, द आइडिया ऑफ परसनालिटी इन सूफीइज्म, पृ.–18
5. श्री रामपूजन तिवारी, सूफी मत : साधना और सहित्य, पृ.–310
6. श्री चन्द्रबली पाण्डेय, तसव्वुफ, और सूफ़ीमत, पृ.–122